चालुक्य राजवंश
[CHALUKYAS DYNASTY]

चालुक्य वंश की उत्पत्ति के विषय में कोई स्पष्ट सूचना नहीं मिलती है। कुछ विद्वान उन्हें 'शूलिक' जाति से सम्बन्धित मानते हैं जिसका वर्णन वराहमिहिर की कृति *वृहत्संहिता* में प्राप्त होता है। परन्तु **बिसेंट ए. स्मिथ** उन्हें विदेशी मानते हैं तथा उनका सम्बन्ध 'चम्प' जाति से जो कि गुर्जर जाति की ही एक शाखा थी से मानते हैं। **नीलकंठ शास्त्री** इस वंश का प्रारम्भिक नाम 'चलक्य' मानते हैं।

चालुक्य-वंश की मुख्य शाखा जिसने इस वंश के साम्राज्य की नींव डाली, बादामी अथवा वातापी (बीजापुर जिला) के चालुक्यों की थी। बादामी के चालुक्यों को प्रारम्भिक पश्चिमी चालुक्य भी पुकारा गया है। उनकी एक शाखा वेंगी अथवा पिष्टपुर के पूर्वी चालुक्य थे जिन्होंने 7वीं सदी के प्रारम्भ में अपने लिए एक स्वतन्त्र राज्य की स्थापना की परन्तु वे अन्त में राष्ट्रकूट-शासकों के अधीन हो गये। इनकी एक शाखा कल्याणी के चालुक्य थे जिन्हें बाद में पश्चिमी या पिछले चालुक्य भी पुकारा गया और जिन्होंने 10वीं सदी के उत्तरार्द्ध में राष्ट्रकूट-शासकों से अपने वंश के राज्य को पुनः छीन लिया और एक बार फिर चालुक्यों की कीर्ति को स्थापित किया। **ह्वेनसांग** के विवरण में पुलकेशियन् द्वितीय को स्पष्टतः क्षत्रिय कहा गया है। अतः उपर्युक्त साक्ष्यों के आलोक में चालुक्य शासकों को क्षत्रिय जाति से सम्बन्धित माना जा सकता है।

1. बादामी के चालुक्य (Chalukyas of Badami)

कैरा तामपत्र (72-73 ई.) से ज्ञात होता है कि वातापी अथवा बादामी के चालुक्य राजवंशों का प्रथम ऐतिहासिक व महत्वपूर्ण शासक जयसिंह था। बादामी के चालुक्यों ने छठी सदी के मध्य से लेकर 8वीं सदी के मध्य तक के प्रायः 200 वर्षों के समय में *दक्षिणापथ* (विन्ध्याचल पर्वत और कृष्णा नदी के बीच के भाग को, जिसमें पश्चिम में महाराष्ट्र और पूर्व

में तेलुगू भाषा-भाषी प्रदेश सम्मिलित था, साधारणतया दक्षिणापथ पुकारा गया है) में एक विस्तृत साम्राज्य का निर्माण किया।

इस वंश के प्रथम शासक जयसिंह के पश्चात् उसका पुत्र रनराग सिंहासन पर बैठा। रनराग का पुत्र पुलकेशियन् प्रथम (535–566 ई.) हुआ जिसने वातापी (बादामी) के किले का निर्माण किया और उसे अपनी राजधानी बनाया। उसका उत्तराधिकारी कीर्तिवर्मन् प्रथम (566 अथवा 567–597 अथवा 598 ई.) था जिसने कदम्ब, कोंकण, नल आदि राजवंशों के राजाओं को परास्त करके अपने राज्य का विस्तार किया। उसकी मृत्यु के पश्चात् उसके भाई मंगलेश (597 अथवा 598–610 अथवा 611 ई.) ने गद्दी के उत्तराधिकारी पुलकेशियन् द्वितीय का संरक्षक बनकर शासन किया। उसके पश्चात् पुलकेशियन् द्वितीय शासक हुआ।

पुलकेशियन् द्वितीय (610 अथवा 611 से 642 ई.) ऐहोल-प्रशस्ति के अनुसार कीर्तिवर्मन के वीर पुत्र पुलकेशियन् II ने अपने कपटी चाचा मंगलेश की हत्या करके बलपूर्वक चालुक्य राज्य प्राप्त किया। पुलकेशियन् II के राज्यकाल के तीसरे वर्ष के हैदराबाद ताम्रपत्र लेख (912–13 ई.) के अनुसार उसने बादामी का राजसिंहासन सम्भवतः 609–610 ई. में प्राप्त किया था। इस कारण पुलकेशियन् के शासन का प्रारम्भ संघर्ष और कठिनाइयों से आरम्भ हुआ। परन्तु उसने अपनी योग्यता से चालुक्यों को श्रेष्ठता प्रदान की। उसने दक्षिण में कदम्बों को परास्त किया, मैसूर के गंग और आलूप शासकों को अपनी अधीनता स्वीकार करने के लिए बाध्य किया, कोंकण के मौर्यों को परास्त करके उनकी राजधानी राजपुरी (एलिफेण्टा) पर अधिकार कर लिया, उत्तर में लाट, मालव और गुर्जर-शासकों को अपनी अधीनता मानने के लिए बाध्य किया, पूर्व में कलिंगों को परास्त किया और पिष्टपुर को जीत कर अपने भाई विष्णुवर्धन (जिसने पिष्टपुर को राजधानी बनाकर पूर्वी चालुक्यों के स्वतन्त्र राज्य की स्थापना की) को अपना राज्यपाल बनाया। परन्तु उसकी सबसे प्रशंसनीय विजय सम्राट हर्ष के विरुद्ध थी जिसके कारण हर्ष दक्षिण भारत में प्रवेश न कर सका। पुलकेशियन् द्वितीय के समय में चालुक्यों और सुदूर दक्षिण के पल्लव-शासकों में भी संघर्ष आरम्भ हुआ। पुलकेशियन् ने पल्लव-शासक महेन्द्रवर्मन् को परास्त किया और उसके राज्य की सीमाओं को अपने राज्य में सम्मिलित कर लिया। तत्पश्चात् उसने चोल, चेर और पाण्ड्य राज्यों से मित्रता की जिससे वे पल्लवों के विरुद्ध उसके सहायक बने रहें। परन्तु महेन्द्रवर्मन् के उत्तराधिकारी नरसिंहवर्मन् (630–668 ई.) ने उस पराजय का बदला लिया। उसने पुलकेशियन् को पराजित ही नहीं किया अपितु चालुक्यों की राजधानी बादामी पर अधिकार कर लिया। 642 ई. के लगभग इन्हीं युद्धों में पुलकेशियन् मारा गया। इस प्रकार पुलकेशियन् अन्त में पल्लवों से पराजित हुआ। परन्तु उसने चालुक्यों को जो श्रेष्ठता और गौरव प्रदान किया था वह उसकी मृत्यु के पश्चात् भी समाप्त न हो सका। उसके उत्तराधिकारियों ने पल्लवों से संघर्ष को जारी रखा।

विक्रमादित्य प्रथम (655–681 ई.)—पुलकेशियन् द्वितीय की मृत्यु के समय पल्लवों ने बादामी और चालुक्यों के राज्य के दक्षिणी भाग पर अधिकार कर रखा था। इसका लाभ उठाकर चालुक्यों के राज्यपालों ने स्वयं को स्वतन्त्र घोषित कर दिया। पुलकेशियन् के पुत्र पल्लवों से संघर्ष करते रहे और सम्भवतया आपस में भी संघर्ष करते रहे जिसके कारण 642 ई. से प्रायः 655 ई. तक हमें किसी चालुक्य-शासक के नाम का पता नहीं लगता। अन्त में, इस संघर्ष में पुलकेशियन् का छोटा पुत्र विक्रमादित्य सफल हुआ। उसने बादामी पर अधिकार कर लिया और पल्लवों को अपने राज्य से बाहर निकाल दिया। विक्रमादित्य अपने पिता के समान

ही योग्य था। उसने चोल, चेर और पाण्ड्य शासकों को परास्त किया। उसने अपने वंश के अपमान का बदला लेने के लिए पल्लव-शासक महेन्द्रवर्मन् द्वितीय और परमेश्वरवर्मन् प्रथम से युद्ध किये, उनको पराजित किया तथा कुछ समय के लिए उनकी राजधानी काँची पर भी अपना अधिकार कर लिया। परन्तु उनकी यह विजय स्थायी नहीं रही। बाद में परमेश्वरवर्मन् प्रथम ने विक्रमादित्य को परास्त करके अपने सम्पूर्ण राज्य को चालुक्यों से छीन लिया।

विक्रमादित्य के महत्वपूर्ण उत्तराधिकारी विनयादित्य (681–696 ई.) और विक्रमादित्य द्वितीय (733–744 ई.) हुए। विनयादित्य ने पल्लवों से युद्ध करने के अतिरिक्त उत्तर-भारत पर भी सफल आक्रमण किये जबकि विक्रमादित्य द्वितीय ने पल्लव-नरेश परमेश्वरवर्मन् को परास्त करने में सफलता पायी।

कीर्तिवर्मन् (747–757 ई.)—यह बादामी के चालुक्यों का अन्तिम शासक हुआ। पल्लव- शासकों से हुए संघर्षों ने चालुक्यों की शक्ति को दुर्बल बना दिया था। अपनी दुर्बल स्थिति में कीर्तिवर्मन् द्वितीय अपने उत्तर-भारत के राज्यपालों की ओर पूर्ण ध्यान न दे सका। उन्हीं में से राष्ट्रकूट-वंश के दन्तिदुर्ग ने कीर्तिवर्मन् द्वितीय के राज्य के अधिकांश भाग को जीतकर राष्ट्रकूटों के वैभव-काल को आरम्भ किया। दन्तिदुर्ग की मृत्यु के पश्चात् कीर्तिवर्मन् द्वितीय ने अपने राज्य को पुनः प्राप्त करने का प्रयत्न किया परन्तु वह असफल हुआ और दन्तिदुर्ग के उत्तराधिकारी कृष्णा प्रथम ने उसके बचे हुए राज्य को भी उससे छीनकर बादामी के चालुक्यों के राज्य को समाप्त कर दिया।

2. वेंगी के पूर्वी चालुक्य (Eastern Chalukyas of Vengi)

बादामी के चालुक्य सम्राट द्वितीय ने अपने दक्षिण भारतीय अभियानों में सम्पूर्ण दक्कन को जीतकर एक विशाल साम्राज्य की स्थापना की। उसने पूर्वी दक्कन को नियन्त्रित करने के लिए अपने छोटे भाई विष्णुवर्धन को वहाँ का राज्यपाल नियुक्त किया। बाद में विष्णुवर्धन ने अपनी शक्ति बढ़ाकर स्वयं को स्वतन्त्र घोषित कर दिया। इसी को वेंगी के पूर्वी चालुक्य राजवंश नाम से जाना जाता है। विष्णुवर्धन प्रथम (615–633 ई.) उसका पहला शासक हुआ। पूर्वी चालुक्यों की पहली राजधानी पिष्टपुर थी, उसके पश्चात् वेंगी बनी और अन्त में राजमहेन्द्री बनी। विष्णुवर्धन के पश्चात् क्रमशः जयसिंह प्रथम (633–663 ई.), इन्द्रवर्मन् (663 ई.), विष्णुवर्धन द्वितीय (663–672 ई.), सर्वलोकाश्रय (मंगि या विजयसिद्धि) (672-696 ई.), जयसिंह द्वितीय (696-709 ई.), कोकुल विक्रमादित्य (709 ई.), विष्णुवर्धन द्वितीय (709–746 ई.) और विजयादित्य प्रथम (746–764 ई.) शासक हुए। विजयादित्य के समय में राष्ट्रकूटों ने बादामी के चालुक्यों को समाप्त कर दिया और उसके पश्चात् पूर्वी चालुक्यों को समाप्त करने के प्रयत्न आरम्भ किये जिसके कारण राष्ट्रकूटों और पूर्वी चालुक्यों का संघर्ष शुरू हुआ।

विजयादित्य का उत्तराधिकारी उसका पुत्र विष्णुवर्धन चतुर्थ (764–799 ई.) हुआ। उसके समय में 769 ई. में राष्ट्रकूटों ने विष्णुवर्धन को परास्त करके उसे अपना आधिपत्य स्वीकार करने के लिए बाध्य किया। 799 ई. में गोविन्द द्वितीय और उसके भाई ध्रुव में राष्ट्रकूट-सिंहासन के लिए संघर्ष हुआ। इसमें चालुक्यों ने गोविन्द की सहायता की। परन्तु अन्त में ध्रुव विजयी हुआ और उसने चालुक्यों को पराजित करके अपमानित किया। विष्णुवर्धन का उत्तराधिकारी विजयादित्य द्वितीय (799–847 ई.) हुआ यद्यपि उसके भाई भीम ने राष्ट्रकूट-शासक गोविन्द तृतीय की सहायता लेकर कुछ वर्षों के लिए उससे सिंहासन छीन लिया, परन्तु अन्त में विजयादित्य की ही विजय हुई। विजयादित्य ने 12 वर्ष तक राष्ट्रकूट और

गंग-शासकों से संघर्ष किया। आरम्भ में वह सफल भी हुआ परन्तु अन्त में गोविन्द तृतीय के उत्तराधिकारी अमोघवर्ष ने उसे राष्ट्रकूटों का आधिपत्य स्वीकार करने के लिए बाध्य किया।

विष्णुवर्धन पंचम (847-848 ई.) विजयादित्य का उत्तराधिकारी हुआ परन्तु उसने केवल 18 या 20 माह शासन किया। उसके पश्चात् उसका पुत्र विजयादित्य तृतीय (848-892 ई.) शासक हुआ। विजयादित्य तृतीय इस वंश का सबसे अधिक शक्तिशाली शासक हुआ जिसने पल्लव, पाण्ड्य, पश्चिमी गंग, दक्षिणी कोसल, कलिंग, कलचुरि और राष्ट्रकूट-शासकों को परास्त किया।

विजयादित्य तृतीय के पश्चात् चालुक्य भीम प्रथम (892-921 ई.) शासक बना। उसका सम्पूर्ण शासन-काल राष्ट्रकूट-शासक कृष्णा द्वितीय से संघर्ष करते हुए व्यतीत हुआ। वह कई बार परास्त भी हुआ परन्तु अन्त में वह राष्ट्रकूटों को अपने राज्य की सीमाओं से बाहर निकालने में सफल हुआ। परन्तु इस संघर्ष ने चालुक्यों की शक्ति को बहुत दुर्बल कर दिया। चालुक्य भीम के पश्चात् क्रमशः विजयादित्य चतुर्थ (921-922 ई.), अम्मा प्रथम (922-929 ई.) और विजयादित्य पंचम् शासक हुए। विजयादित्य पंचम् ने केवल 15 दिन शासन किया और ताल ने उसे सिंहासन से हटा दिया। उस समय से चालुक्यों में पारस्परिक प्रतिद्वन्द्विता की शुरुआत हुई। राजवंश के विभिन्न व्यक्तियों ने बाहरी शक्तियों की सहायता लेकर सिंहासन पर अधिकार करने का प्रयत्न किया जिसके कारण शासकों में जल्दी-जल्दी परिवर्तन हुए और क्रमशः विक्रमादित्य द्वितीय (9-11 माह), भीम द्वितीय (8 माह), और युद्धमल्ल द्वितीय (930-935 ई.) शासक हुए। मल्ल के समय में आन्ध्र-प्रदेश में राष्ट्रकूट पूर्ण शक्तिशाली बन चुके थे। मल्ल को परास्त करके चालुक्य भीम तृतीय (935-946 ई.), ने प्रायः 12 वर्ष शासन किया। उसके पश्चात् अम्मा द्वितीय (946-956 ई.), बादप, ताल द्वितीय, पुनः अम्मा द्वितीय, दानारनव और चोडा भीम शासक हुए। अन्त में, चोल-शासक राजपाल की सहायता लेकर शक्तिवर्मन् प्रथम (दानारनव का पुत्र) ने वेंगी पर अधिकार (999 ई.) में कर लिया। उसके समय से चालुक्यों की स्वतन्त्र सत्ता नष्ट हो गयी और वे चोल-शासकों के अधीन शासक मात्र रह गये। इस प्रकार, राष्ट्रकूट-शासकों से संघर्ष और अपनी आन्तरिक फूट के कारण 10वीं सदी के अन्त में पूर्वी चालुक्यों का स्वतन्त्र अस्तित्व नष्ट हो गया।

3. कल्याणी के उत्तरकालीन पश्चिमी चालुक्य (Later Western Chalukyas of Kalyani)

कल्याणी के चालुक्य राष्ट्रकूट-शासकों के अधीन सामंत शासक थे। अन्तिम राष्ट्रकूट-शासक कर्क के समय में उसके चालुक्य सामन्त तैल द्वितीय ने विद्रोह किया और कर्क को परास्त करके राष्ट्रकूटों के राज्य पर अधिकार कर लिया। गंग-शासक मारसिंह ने अपने भतीजे और राष्ट्रकूट-वंशज इन्द्र की तरफ से एक बार फिर राष्ट्रकूटों के राज्य को प्राप्त करने का प्रयत्न किया परन्तु उसकी पराजय हुई। इस प्रकार, तैल द्वितीय ने पिछले चालुक्यों के साम्राज्य का निर्माण राष्ट्रकूट-साम्राज्य के अवशेषों पर किया।

तैल द्वितीय (993-997 ई.) एक महान् योद्धा हुआ। उसने चेदि, उड़ीसा, कुन्तल, गुजरात के चालुक्य, मालवा के परमार-शासक मुंज और चोल-शासक उत्तम को परास्त किया। तैल द्वितीय ने छः बार मालवा पर आक्रमण किया परन्तु हर बार शासक मुंज या उत्पल ने इन आक्रमणों का सफलतापूर्वक प्रतिरोध किया। बार-बार के आक्रमणों से परेशान होकर मुंज ने गोदावरी पार कर चालुक्य साम्राज्य पर आक्रमण कर दिया। परन्तु मुंज पराजित हुआ और उसे बन्दी बनाकर मान्यखेद लाया गया जहाँ बाद में उसकी हत्या कर दी गई। उसने लाट

और पांचाल-प्रदेश को अपने अधीन कर लिया। इस प्रकार, विभिन्न युद्धों में भाग लेकर उसने चालुक्यों के एक बड़े साम्राज्य का निर्माण किया। वह अपने को बादामी के महान् चालुक्य-शासकों का वंशज बताता था। उसने पुनः उनकी कीर्ति की स्थापना की।

तैल के उत्तराधिकारी सत्याश्रय (997-1008 ई.) को भी अनेक युद्ध लड़ने पड़े। उसे परमार-शासक सिन्धुराज और कलचुरि-शासक कोक्कल द्वितीय ने परास्त किया परन्तु उसने चोल-शासक राजराज को परास्त करने में सफलता पायी। सत्याश्रय के उत्तराधिकारी विक्रमादित्य पंचम् (1008-1014 ई.) और अय्यन द्वितीय (1014-1015 ई.) का शासन-काल महत्वहीन रहा। उनके पश्चात् जयसिंह द्वितीय (1015-1043 ई.) को कलचुरि के गांगेयदेव, परमार भोज और राजेन्द्र चोल जैसे शक्तिशाली राजाओं की सम्मिलित शक्ति का मुकाबला करना पड़ा। झगड़े का मुख्य कारण चालुक्यों तथा चोल-शासकों का वेंगी के पूर्वी चालुक्य-राज्य पर अधिकार करने का प्रयत्न था। परन्तु जयसिंह अपने राज्य की रक्षा करने में असमर्थ रहा।

उसके पश्चात् सोमेश्वर प्रथम (1043-1068 ई.) शासक बना। सोमेश्वर प्रथम को उत्तर भारत में सफलता प्राप्त हुई। उसने 1055 ई. में मालवा के परमार शासक भोज और इसके बाद कलचुरि शासक लक्ष्मीकर्ण और परमार शासक भोज को पराजित करके आधुनिक मध्य प्रदेश के दक्षिणी जिलों पर अधिकार कर लिया। उसने कोंकण को जीता, मालवा, गुजरात, दक्षिणी-कोसल और केरल पर आक्रमण किये तथा कलचुरि-शासक कर्ण से युद्ध किया। परन्तु उसका मुख्य झगड़ा चोल-शासकों से रहा। चोल-शासक राजाधिराज ने उसकी राजधानी कल्याणी को लूटने में सफलता पायी परन्तु सोमेश्वर संघर्ष करता रहा और अन्त में एक युद्ध में राजाधिराज चोल मारा गया। परन्तु उसके भाई राजेन्द्र चोल द्वितीय ने सोमेश्वर के आक्रमणों के विरुद्ध चोल-राज्य की रक्षा करने में सफलता पायी और अन्त में 1063 ई. में सोमेश्वर की पराजय हुई। सोमेश्वर प्रथम के पश्चात् सोमेश्वर द्वितीय (1068-1076 ई.) और उसके बाद विक्रमादित्य षष्ठ (1076-1126 ई.) शासक बना। विक्रमादित्य ने अनेक राजाओं से युद्ध करके अपने राज्य का विस्तार किया। उसका राज्य उत्तर में नर्मदा नदी और दक्षिण में कड़प्पा तथा मैसूर तक फैला हुआ था। विक्रमादित्य के पश्चात् सोमेश्वर तृतीय (1126-1138 ई.), जगदेकमल्ल (1138-1151 ई.) और तैल तृतीय शासक हुए। तैल तृतीय के समय में चालुक्य-राज्य छिन्न-भिन्न हो गया। उसने चालुक्य कुमारपाल और कुलोत्तुंग चोल के विरुद्ध तो सफलता पायी परन्तु काकतीय राजाओं के विरुद्ध उसकी पराजय हुई। अन्त में, उसी के सेनापति विज्जल ने उसकी राजधानी कल्याणी पर अपना अधिकार कर लिया। 1156-1181 ई. के मध्य-काल में वास्तविक सत्ता विज्जल और उसके वंश के उत्तराधिकारियों के हाथों में रही। 1181 ई. में सोमेश्वर चतुर्थ (1181-1189 ई.) ने अपने वंश के राज्य पर अधिकार कर लिया परन्तु यादव-शासक भिल्लम ने उसे परास्त करके भागने पर बाध्य किया। सोमेश्वर चतुर्थ को जो चालुक्य-वंश का अन्तिम शासक हुआ, गोआ में अपने ही एक अधीन सामन्त के यहाँ रहकर अपना शेष जीवन व्यतीत करना पड़ा।

4. चालुक्य-वंश की उपलब्धियाँ (Achievements of Chalukya Dynasty)

चालुक्य-वंश के शासकों ने दक्षिणापथ में एक विशाल साम्राज्य स्थापित किया। बादामी के चालुक्यों ने प्रायः 200 वर्षों तक और उसी प्रकार कल्याणी के चालुक्यों ने भी बाद में प्रायः उतने ही समय तक इस साम्राज्य तथा इसकी कीर्ति को स्थापित रखा। इस वंश के शासकों में अनेक शासक महान् योद्धा हुए और उन्होंने उत्तर तथा दक्षिण भारत के अनेक

यशस्वी शासकों को परास्त करने में सफलता पायी। उनमें से अनेक ने परमेश्वर, परमभट्टारक आदि उपाधियाँ ग्रहण कीं। इस प्रकार, दक्षिण भारत की राजनीति में उनका स्थान एक लम्बे समय तक महत्वपूर्ण रहा।

परन्तु राजनीति के अतिरिक्त उन्होंने दक्षिण भारत की सांस्कृतिक प्रगति में भी महत्वपूर्ण भाग लिया। चालुक्य-शासकों का राज्य आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न था और उसके अन्तर्गत कई अच्छे बन्दरगाह थे जिनसे विदेशी व्यापार में सुविधा थी। उस सम्पन्नता का उपयोग चालुक्य-शासकों ने साहित्य तथा ललित-कलाओं की प्रगति के लिए किया।

धार्मिक दृष्टि से चालुक्य-शासक हिन्दू धर्म के अनुयायी थे। उन्होंने प्राचीन वैदिक धर्म के अनुसार अनेक यज्ञ किये और उनके समय में धार्मिक ग्रन्थों की रचना अथवा उनका संकलन किया गया। पुलकेशियन् द्वितीय और कुछ अन्य शासकों ने अश्वमेध और ताड्मेय जैसे यज्ञ किये थे। परन्तु उन्होंने पौराणिक हिन्दू धर्म का भी पालन किया और विष्णु तथा शिव के मन्दिरों का निर्माण कराया। इससे हिन्दू धर्म दक्षिण-भारत में लोकप्रिय हुआ। परन्तु चालुक्य-शासक धार्मिक दृष्टि से बहुत उदार थे। अन्य धर्मों के प्रति उनका व्यवहार पूर्ण सहनशीलता का था, मुख्यतया उनमें से कई ने जैन धर्म को सहायता प्रदान की। ऐहौल-प्रशस्ति का लेखक रविकीर्ति जैन था परन्तु उसने पुलकेशियन् द्वितीय से सर्वोच्च पुरस्कार प्राप्त किया था। इसी प्रकार विजयादित्य और विक्रमादित्य ने जैन विद्वानों को अनेक गाँव दान में दिये थे। दक्षिण भारत में जैन धर्म लोकप्रिय था। सम्भवतया, इसी कारण अपनी प्रजा की धार्मिक भावनाओं को ध्यान में रखते हुए चालुक्य-शासकों ने जैन धर्म के प्रति उदारता की नीति अपनायी थी। परन्तु इसके अतिरिक्त बम्बई के थाना जिले में पारसियों को बसने की आज्ञा देना और उन्हें उनके धर्म का पालन करने की पूर्ण स्वतन्त्रता प्रदान करना चालुक्यों की उदार धार्मिक प्रवृत्ति को सिद्ध करता है। उनके समय में बौद्ध धर्म पतनोन्मुख था परन्तु सर्वथा लुप्त नहीं हुआ था, जैसा कि चीनी-यात्री ह्वेनसांग के वर्णन से सिद्ध भी होता है। ह्वेनसांग ने अनेक व्यवस्थित बौद्ध-विहारों और मठों को चालुक्य-राज्य के अन्तर्गत पाया था।

ललित-कलाओं में चित्र-कला और सबसे अधिक वास्तु-कला की प्रगति इस समय में हुई। अजन्ता के भित्ति-चित्रों में से कुछ का निर्माण चालुक्य-शासकों के समय में हुआ। इनमें से एक चित्र में पुलकेशियन् द्वितीय के दरबार में पर्शिया (ईरान) के राजदूत के स्वागत के दृश्य को चित्रित किया गया है। वास्तु-कला के क्षेत्र में चालुक्यों के समय की एक मुख्य विशेषता पहाड़ों और चट्टानों को काटकर बड़े-बड़े मन्दिरों का निर्माण था। उनके समय में विभिन्न हिन्दू गुहा (गुफा)-मन्दिरों और चैत्य-हालों का निर्माण किया गया। सम्राट मंगलेश ने वातापी के विष्णु के गुफा-मन्दिर का निर्माण कराया। 634 ई. में मेगुति का शिव-मन्दिर बनाया गया जिसमें रविकीर्ति द्वारा लिखित पुलकेशियन् द्वितीय की प्रशस्ति भी है। ऐहौल का विष्णु मन्दिर जिसमें विक्रमादित्य द्वितीय का एक अभिलेख है, चालुक्य-कला का एक अच्छा नमूना माना गया है। सम्राट विजयादित्य ने बीजापुर जिले में विजयेश्वर (शिव) का मन्दिर बनवाया जिसे अब संगमेश्वर का मन्दिर पुकारा जाता है। उसकी बहन ने लक्ष्मेश्वर नामक स्थान पर एक जैन मन्दिर का निर्माण कराया। सम्राट विक्रमादित्य की पत्नी ने पट्टुदकल (बीजापुर जिला) नामक स्थान पर लोकेश्वर नाम का एक शिव-मन्दिर बनवाया जिसे अब वीरपक्ष मन्दिर कहा जाता है। इतिहासकार **हैवेल** ने उसकी बहुत प्रशंसा की है। विक्रमादित्य की एक अन्य पत्नी ने इसी मन्दिर के निकट त्रिलोकेश्वर नाम का एक अन्य भव्य मन्दिर बनवाया। चालुक्य-शासकों के समय में बने इन मन्दिरों ने भारतीय वास्तु-कला की प्रगति में सहयोग दिया।

इस प्रकार, चालुक्य-शासकों ने दक्षिण भारत की राजनीति और सांस्कृतिक प्रगति में महत्वपूर्ण भाग लिया।